

[2023] 4 एस.सी.आर 748

विकास चौधरी

बनाम

दिल्ली राज्य

(आपराधिक अपील सं. 2276/2022)

21 अप्रैल, 2023

[न्या. के. एम. जोसेफ और न्या. एस. रवींद्र भट्ट]

सजा/दंडादेश :-

बिना किसी छूट के, 30 वर्ष की एक निश्चित अवधि की सजा के अधिरोपण, - का औचित्य - 18 साल की उम्र के पीड़ित का फिरौती के लिए अपहरण किया गया था और उसी दिन गला घोटकर हत्या कर दी गई थी, और सबूतों को खत्म करने के लिए शरीर को जला दिया गया था - हत्या के अपराध के बाद, आरोपी नियमित रूप से परिवार को फिरौती के लिए फोन करते थे - विचारण न्यायालय ने सभी आरोपी व्यक्तियों धारा 302, 364क, 201, सहपठित धारा 120ख के तहत को दोषी ठहराया - अपीलार्थी- अभि-1 और अभि-2 को भी धारा 411 के तहत दोषी ठहराया साथ ही अभि-1 को अतिरिक्त रूप से धारा 420, 468 और 471 के तहत दोषी ठहराया और 30 साल के कारावास को पूरा करने से पहले बिना किसी पैरोल, छूट या फलों के अपने शेष प्राकृतिक जीवन के लिए आजीवन कारावास की सजा दी गई - उच्च न्यायालय द्वारा बरकरार - अपील पर अभिनिर्धारित किया गया :- "विशेष" या "निश्चित अवधि की सजा" अधिरोपित करने की शक्ति इस न्यायालय और उच्च न्यायालय के पास है - निचली अदालतों को मृत्युदंड के विकल्प के रूप में इस तरह की संशोधित या विशिष्ट अवधि की सजा, या दोषी के शेष जीवन के लिए आजीवन कारावास अधिरोपित करने से रोक दिया गया है - परिवीक्षा अधिकारी की रिपोर्ट, जेल में किए गए काम की प्रकृति पर रिपोर्ट और एक

मनोवैज्ञानिक और मनोरोग मूल्यांकन रिपोर्ट के आधार पर अपीलार्थियों के सुधार और समाज में पुनः एकीकरण की संभावना के समर्थन में मजबूत मामला बना - इसलिए, दोनों अपीलकर्ताओं को दी गई सजा को न्यूनतम 20 साल के वास्तविक कारावास की अवधि में संशोधित किया जाता है - दंड संहिता, 1860 - धाराएं 120ख, 201, 302, 364क, 411 - दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 433क।

विशेष या निश्चित अवधि की सजा - गंभीर अपराधों में मृत्युदंड के विकल्प के रूप में इसे अधिरोपित करना - अभिनिर्धारित किया : धारा 433क दं.प्र.सं. में निर्दिष्ट न्यूनतम सजा से परे विशेष या निश्चित अवधि की सजा अधिरोपित करने की शक्ति श्रीहरन के मामले में निर्णय के अनुसार पूरी तरह से उच्च न्यायालयों और सर्वोच्च न्यायालय के पास आरक्षित है - दंड प्रक्रिया संहिता - धारा 433क।

पालन की जाने वाली प्रक्रिया - ऐसे अपराध जहां अभियोजन पक्ष द्वारा मृत्युदंड प्रस्तावित है - विचारण न्यायालय और राज्य की भूमिका - अभिनिर्धारित किया : उत्तेजक और शमनकारी परिस्थितियों को संतुलित करना विचारण न्यायालय का दायित्व है - जबकि, राज्य को अभियुक्त के मनोरोग और मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन का खुलासा करने वाली सामग्री (पहले से एकत्र) और सभी वस्तुनिष्ठ सामग्री, चाहे अनुकूल हो या प्रतिकूल, प्रस्तुत करनी चाहिए, क्योंकि वह इस जानकारी को एकत्र करने की स्थिति में है और न्यायालय को एक न्यायपूर्ण सजा पर पहुंचने में सुविधा प्रदान करता है।

आंशिक रूप से अपीलों को अनुमति देते हुए, न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया : 1.1 श्रीहरन के मामले में इस न्यायालय ने गंभीर अपराधों में सजा (जिसे विशेष या निश्चित अवधि की सजा कहा जाता है) लागू करने की उपयुक्तता पर विचार किया, जिसमें सजा के विकल्प के रूप में मौत की सजा (आजीवन कारावास के अलावा) थी। पिछले फैसलों पर विचार करने के बाद बहुमत के फैसले में कहा गया कि स्वामी श्रद्धानंद के मामले में अनुपात सही था। यह स्पष्ट है कि श्रीहरन मामले ने उन मामलों में एक वैकल्पिक तीसरी सजा के विकल्प को मंजूरी दी, जहां आरोपी संगीन और गंभीर अपराधों के लिए दोषी ठहराए जाते हैं,

जिसमें मौत की सजा का विकल्प होता है। यह महसूस करते हुए कि अपने आप में आजीवन कारावास के परिणामस्वरूप धारा 433क के तहत निर्धारित न्यूनतम सजा काटने पर अभियुक्तों को जल्दी रिहा किया जा सकता है, और इस बात पर प्रकाश डालते हुए कि विभिन्न प्रकार की आजीवन कारावास में न्यूनतम कारावास के संबंध में राज्य के नियमों में विषमता है, इस न्यायालय ने श्रीहरन में बताए गई "विशेष" या "निश्चित अवधि की सजा" को अधिरोपित करने का विकल्प अपने (और उच्च न्यायालयों के) पास बनाए रखने का फैसला किया। [अनुच्छेद 16,17] [762-क-ख; 763-ख-ग]

*भारत संघ बनाम श्रीहरन @मुरुगन और अन्य। (2016)

7 एससीसी 1 : [2015] 14 एस.सी.आर. 613 - का आश्रय लिया।

1.2. यह स्पष्ट है कि विचारण न्यायालयों को मौत की सजा के विकल्प के रूप में इस तरह की संशोधित या विशिष्ट अवधि की सजा, या दोषी के शेष जीवन के लिए आजीवन कारावास की सजा देने से रोक दिया गया है। मृत्युदंड या आजीवन कारावास से दंडनीय अपराध की सुनवाई करते समय न्यायालय के पास केवल ये ही दो विकल्प होते हैं। हालांकि श्रीहरन के मामले में विकसित सिद्धांत स्पष्ट हैं, फिर भी ऐसे मुद्दे हैं जो अभी भी अनछुए और अनसुलझे हैं। जब भी राज्य मौत की सजा देने का प्रस्ताव और आग्रह करता है, तो उसे न्यायालय को उत्तेजक कारकों को शमनकारी परिस्थितियों के साथ संतुलित करने की कवायद में सुविधा प्रदान करने के लिए आवश्यक सामग्री प्रदान करनी होती है - बचन सिंह मामले में प्रस्तावित और कई मामलों में जांचा गया परीक्षण; हाल की प्रवृत्ति यह है कि सुधारात्मक तत्व समान रूप से ध्यान प्राप्त करता है। इस संतुलनकारी हित को पूरा करने का दायित्व पहली बार में सजा देने वाले न्यायालयों पर है, यानी विचारण न्यायालय; अभियोजन पक्ष (बचन सिंह के अनुसार) यह दिखाने के लिए भी बाध्य है कि शमनकारी परिस्थितियां अनुपस्थित हैं, खासकर यह कि अभियुक्त के सुधार की कोई संभावना नहीं है। चूंकि जब भी जघन्य अपराध किया जाता है, तो दोषसिद्धि के स्तर पर यह अभ्यास अनिवार्य होता है, इसलिए न्यायालय को इस बात का कोई अंदाजा नहीं है कि अभियोजन पक्ष मौत की सजा

का आग्रह कर सकता है। जब वह चरण आता है, और अभियोजन मौत की सजा की मांग करता है, तो न्यायालय को उत्तेजक परिस्थितियों (जो पहले से ही ऐसे कारकों के रूप में अभिलेख पर हैं, जो अभियुक्त की दोषसिद्धि का कारण बनते हैं) की समीक्षा करने की और शमनकारी परिस्थितियों (जो अभिलेख का मामला नहीं हैं और अभियोजन पक्ष और अभियुक्त द्वारा प्रस्तुत की जानी हैं) को संतुलित करने की कवायद करनी पड़ती है। [पैरा 18] [763-छ-ज; 764-क-घ]

1.3. “अपराध की क्रूरता के लिए प्रतिशोधी प्रतिक्रिया में फिसलने से बचने के लिए” जिसे इस न्यायालय ने देखा कि ऐसा कई मामलों में अक्सर हो रहा था, विचारण के स्तर पर शमनकारी परिस्थितियों का मूल्यांकन करने की अनिवार्यता को रेखांकित किया गया था, और यह स्पष्ट रूप से माना गया था कि न्यायालय को राज्य और अभियुक्त से जानकारी प्राप्त करनी थी। अभियोजन पक्ष के लिए सत्र न्यायालय के समक्ष अभियुक्त के मनोरोग और मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन का खुलासा करने वाली सामग्री पेश करने के लिए भी अनिवार्य किया गया है, जिसे अधिमानतः पहले से एकत्र किया जाना है। उस चरण पर जब विचारण न्यायालय को सूचित किया जाता है कि अभियोजन मौत की सजा अधिरोपित करने के लिए दबाव डालने का इरादा रखता है, मूल्यांकन पर जोर दिया जाना चाहिए; जैसा कि मनोज के मामले में उल्लेख किया गया है, सभी वस्तुनिष्ठ सामग्रियों को प्रस्तुत करना राज्य का कर्तव्य है, बचन सिंह के मामले में दिए गए निर्णय और महत्वपूर्ण रूप से, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि यह वास्तव में सामग्री इकट्ठा करने की स्थिति में है। इसका कार्य अभियुक्त से संबंधित तथ्यों को प्रस्तुत करना है, जो न्यायालय के लिए उचित सजा देने के लिए अनुकूल और प्रतिकूल हैं। [अनुच्छेद 20] [767-छ-ज; 768-क-ख]

1.4. चूंकि श्रीहरन मामले में निर्णय विशेष या निश्चित अवधि की सजा (जो धारा 433क दं.प्र.सं. में निर्दिष्ट न्यूनतम से अधिक हो सकती है - यानी, काफी लंबी अवधि तक बढ़ सकती है, जैसे कि 30 साल) अधिरोपित करने की शक्ति केवल उच्च न्यायालयों और इस न्यायालय के साथ सुरक्षित रखता है, इसलिए यह जरूरी है कि यह अभ्यास उन मामलों में भी किया जाए जहां अभियुक्त को अंततः मौत की सजा नहीं दी जा

सकती है। सीधे शब्दों में कहें - हालांकि विचारण न्यायालयों को इस तरह की विशेष सजा देने का अधिकार नहीं है, फिर भी जब वे एक जघन्य अपराध के मामले में अपराध के निष्कर्षों पर पहुंचते हैं, तो अंततः लगाई गई सजा की प्रकृति क्या होगी, अज्ञात है; इसलिए, अभियोजन पक्ष को न्यायालय को सूचित करना होगा, और मौत की सजा प्रस्तावित होने की स्थिति में प्रासंगिक सामग्री (जैसा कि मनोज में विस्तार से बताया गया है) पेश करनी होगी। उस स्थिति में, यदि अंततः मौत की सजा नहीं दी जाती है, तो यह राज्य (या पीड़ित पक्ष, धारा 372 दं.प्र.सं. के तहत) के लिए खुला है कि वह सजा के बिंदु पर विचारण न्यायालय के निर्णय के खिलाफ अपील कर सकता है; उस स्तर पर उच्च न्यायालय के समक्ष सूक्ष्म और दोषी के बारे में पूरी सामग्री की सूचना के साथ मूल्यांकन होगा, अन्यथा इसका लाभ नहीं होगा। इसके अलावा, यदि विचारण चरण, जिस पर यह कार्य किया गया था, के बाद से काफी समय बीत चुका है तो अपीलीय न्यायालय को निर्देश देना चाहिए कि दोषी द्वारा की गई समकालीन प्रगति, यदि कोई हो, को ध्यान में रखने के लिए एक नया प्रयास किया जाए। जहां भी अभियोजन पक्ष की राय है कि जिस अपराध के लिए एक अभियुक्त को दोषी ठहराया गया है, वह इतना गंभीर है कि मौत की सजा की आवश्यकता है, उसे मूल्यांकन के लिए मनोज के संदर्भ में सामग्री रखने की कवायद करनी चाहिए। यदि इसके परिणामस्वरूप पुष्टि के चरण में मौत की सजा दी जाती है, तो उच्च न्यायालय को इन सामग्रियों के स्वतंत्र मूल्यांकन का लाभ होगा। दूसरी ओर, यदि मौत की सजा नहीं दी जाती है, तो, उच्च न्यायालय अभी भी मूल्यांकन करने की स्थिति में हो सकता है, कि सजा पर्याप्त है या नहीं, और जहां भी उचित और न्यायसंगत हो, राज्य द्वारा या शिकायतकर्ता/सूचित करने वाले द्वारा अपील के दौरान एक विशेष या निश्चित अवधि की सजा लागू की जा सकती है। इस तरह की सामग्री को न्यायालय के विचार का हिस्सा बनाने की अनिवार्य आवश्यकता को देखते हुए, इस बात पर जोर दिया जाना चाहिए कि यदि विचारण न्यायालय इस तरह की कवायद (किसी भी कारण से) करने में विफल रहा है, तो उच्च न्यायालय न्यायालय को सजा बढ़ाने के लिए राज्य या शिकायतकर्ता द्वारा दायर अपील पर विचार करते समय ऐसी सामग्री की मांग करनी होगी (चाहे इसके परिणामस्वरूप मौत की

सजा अधिरोपित किया जाए, या एक अवधि की सजा दी जाए)। [अनुच्छेद 21,22] [768-ग-ज; 769-क-ख]

1.5. अपीलकर्ताओं की शमनकारी परिस्थितियों के बारे में सीमित सामग्री थी; मौजूदा जेल रिपोर्ट और परिवीक्षा अधिकारी की रिपोर्ट भी पुरानी हो चुकी थीं। इसलिए, इस न्यायालय ने सजा के सवाल पर निष्पक्ष विचार की सुविधा के लिए तीन रिपोर्ट तैयार करने और प्रस्तुत करने का निर्देश दिया। ये थीं :- परिवीक्षा अधिकारी की एक रिपोर्ट, जेल में रहते हुए किए गए काम की प्रकृति पर रिपोर्ट (जेल प्रशासन द्वारा), और एक मनोवैज्ञानिक और मनोरोग मूल्यांकन रिपोर्ट (वीआईएमएचएनएस के निदेशक द्वारा); ये अभिलेख पर हैं, और वर्तमान मामले में उपयुक्त व्यक्तिगत सजाएं निर्धारित करने के लिए इस न्यायालय के विचार का हिस्सा हैं। अपीलकर्ताओं के अधिवक्ता ने सजा के सवाल पर संशोधन के लिए शमनकारी कारकों और औचित्यों को रेखांकित करते हुए लिखित प्रस्तुतियों को भी अभिलेख पर रखा है। [अनुच्छेद 24] [769-ड-च; 770-क-ख]

1.6. इस अपराध का एकमात्र उद्देश्य लालच प्रतीत होता है। निस्संदेह, अपराध को अंजाम देने में पूर्व संकल्प था। ये उत्तेजक परिस्थितियां हैं। [अनुच्छेद 27] [771-घ-ड]

1.7. वर्तमान मामले में दोनों अपीलकर्ता, कुछ समानताएं साझा करते हैं: वे अपराध के समय कम उम्र के थे, शिक्षित पृष्ठभूमि से हैं, और उन्हें अपने परिवारों का प्रेम और स्नेह प्राप्त है, जिनमें से प्रत्येक का वे जिन समुदायों में रहते हैं, उनके भीतर अच्छी स्थिति और मजबूत संबंध हैं। जबकि दोषसिद्धि से पहले उनके जीवन और सामाजिक स्थितियों से संबंधित सामग्री अपराध होने के कारण के बारे में स्पष्टीकरण नहीं देती है, यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि दोषसिद्धि के बाद उनके आचरण के बारे में उपलब्ध सामग्री उत्साहजनक बनी हुई है। उन्होंने कारावास के समय खुद को काम लगाए रखा है और सार्थक योगदान देने के लिए अपने समय का उपयोग किया है - जिसके लिए उन्हें प्रत्येक को प्रशंसा मिली है। चिंता के कारण के बिना, उनके मनोरोग और मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन सामान्य होने का निष्कर्ष निकाला गया था।

अपीलकर्ताओं के सुधार की संभावना (जैसा कि पहले से ही उनके जेल आचरण से स्पष्ट है), और समाज में पुनः एकीकरण के समर्थन में एक मजबूत मामला बनाया गया है। राज्य ने भी इस पहलू के बारे में इसके विपरीत किसी सामग्री का संकेत नहीं दिया है। [अनुच्छेद 28] [771-ड-ज]

1.8. तथ्यों और परिस्थितियों की समग्रता को देखते हुए, और उपरोक्त कारणों से, इस न्यायालय की राय है कि दोनों अपीलकर्ताओं को दी गई सजा को न्यूनतम 20 साल के वास्तविक कारावास में संशोधित करना उचित होगा। [अनुच्छेद 29] [771-ज; 772-क]

अमित बनाम महाराष्ट्र राज्य (2003) 8 एससीसी 93 :
[2003] सप. 2 एससीआर 285; *लक्ष्मण नस्कर बनाम पश्चिम बंगाल* (2000) 7 एससीसी 626 : [2000] सप. 3 एससीआर 62; *राजेंद्र प्रह्लादराव वासनिक बनाम महाराष्ट्र राज्य* (2019) 12 एससीसी 460:[2018] 14 एससीआर 585; *स्वामी श्रद्धानंद बनाम कर्नाटक राज्य* (2008) 13 एससीसी 767:[2008] 11 एससीआर 93; *संतोष कुमार सतीशभूषण बरियार बनाम राज्य महाराष्ट्र* (2009) 6 एससीसी 498:[2009] 9 एससीआर 90; *हरियाणा राज्य बनाम जगदीश* (2010) 4 एससीसी 216:[2010] 3 एससीआर 716; *रमेश बनाम राजस्थान राज्य* (2011) 3 एससीसी 685 :[2011] 4 एससीआर 585; *बिरजू बनाम मध्य प्रदेश राज्य* (2014) 3 एससीसी 421:[2014] 1 एससीआर 1047; *शंकर किसनराव खाड़े बनाम महाराष्ट्र राज्य* (2013) 5 एससीसी 546: [2013] 6 एससीआर 949; *अनिल @एंथनी अरिक्सवामी जोसेफ बनाम महाराष्ट्र राज्य* (2014) 4 एससीसी 69:[2014] 3 एससीआर 34; *राजू जगदीश पासवान बनाम महाराष्ट्र राज्य* (2019) 16 एससीसी 380; *सतीश @साब्बे बनाम उत्तर प्रदेश राज्य* 2020 एससीसी ऑनलाइन एससी 791; *मोहम्मद फिरोज बनाम मध्य प्रदेश राज्य* (2022) 7 एससीसी 433; *अरविंद सिंह बनाम महाराष्ट्र राज्य* (2021) 11 एससीसी 1; *गौरी शंकर बनाम पंजाब राज्य* (2021) 3 एससीसी 380; *बचन*

सिंह बनाम भारत संघ (1980) 2 एससीसी 684:[1983] 1 एससीआर 145; माछी सिंह बनाम पंजाब राज्य (1983) 3 एससीसी 470:[1983] 3 एससीआर 413; गोपाल विनायक गोडसे बनाम महाराष्ट्र राज्य [1961] 3 एससीआर 440; दलबीर सिंह बनाम पंजाब राज्य (1979) 3 एससीसी 745:[1979] 3 एससीआर 1059; सुभाष चंदर बनाम कृष्ण लाल (2001) 4 एससीसी 458:[2001] 2 एससीआर 864; श्री भगवान बनाम राजस्थान राज्य (2001) 6 एससीसी 296:[2001] 3 एससीआर 656; मध्य प्रदेश राज्य बनाम रतन सिंह (1976) 3 एससीसी 470:[1976] सप.1 एससीआर 552; मनोज बनाम मध्य प्रदेश राज्य (2023) 2 एससीसी 353:[2022] 9 एससीआर 452; छन्नू लाल वर्मा बनाम राज्य छत्तीसगढ़ (2019) 12 एससीसी 438:[2018] 14 एससीआर 355 - संदर्भित।

निर्णय विधि संदर्भ

- [2003] सप.2 एससीआर 285 में अनुच्छेद 7 संदर्भित है
- [2000] सप.3 एससीआर 62 में अनुच्छेद 7 संदर्भित है
- [2018] 14 एससीआर 585 में अनुच्छेद 8 संदर्भित है
- [2008] 11 एससीआर 93 में अनुच्छेद 8 संदर्भित है
- [2009] 9 एससीआर 90 में अनुच्छेद 8 संदर्भित है
- [2010] 3 एससीआर 716 में अनुच्छेद 8 संदर्भित है
- [2011] 4 एससीआर 585 में अनुच्छेद 8 संदर्भित है
- [2014] 1 एससीआर 1047 में अनुच्छेद 8 संदर्भित है
- [2013] 6 एससीआर 949 में अनुच्छेद 8 संदर्भित है
- [2014] 3 एससीआर 34 में अनुच्छेद 8 संदर्भित है
- (2019) 16 एससीसी 380 में अनुच्छेद 8 संदर्भित है

(2022) 7 एससीसी 433 में अनुच्छेद 8 संदर्भित है
(2021) 11 एससीसी 1 में अनुच्छेद 9 संदर्भित है
(2021) 3 एससीसी 380 में अनुच्छेद 11 संदर्भित है
[1983] 1 एससीआर 145 में अनुच्छेद 13 संदर्भित है
[1983] 3 एससीआर 413 में अनुच्छेद 13 संदर्भित है
[1961] 3 एससीआर 440 में अनुच्छेद 15 संदर्भित है
[1979] 3 एससीआर 1059 में अनुच्छेद 15 संदर्भित है
[2001] 2 एससीआर 864 में अनुच्छेद 15 संदर्भित है
[2001] 3 एससीआर 656 में अनुच्छेद 15 संदर्भित है
[1976] सप.1 एससीआर 552 में अनुच्छेद 15 संदर्भित है
[2022] 9 एससीआर 452 में अनुच्छेद 19 संदर्भित है
[2018] 14 एससीआर 355 में अनुच्छेद 19 संदर्भित है
[2015] 14 एससीआर 613 में 21 पर भरोसा किया है।

आपराधिक अपील्य क्षेत्राधिकार : आपराधिक अपील सं. 2276/2022।

आप.अ. सं. 319/2018 में दिल्ली उच्च न्यायालय के निर्णय और
आदेश दिनांकित 31.10.2018 से।

सह

आपराधिक अपील सं. 2277/2022।

विवेक सूद, सुश्री मीनाक्षी अरोड़ा, वरिष्ठ अधिवक्तागण, गोपाल झा,
आकाश गोधवानी, सुश्री तन्वी अत्री, अनुज चौहान, आनंद, संकेत, कृष्ण
कुमार, मोहित डी. राम, सुश्री सुनीता अरोड़ा, मोनिशा हांडा, राजुल

श्रीवास्तव, शिवम डेडी, सुश्री गार्गी सिंह, अनुभव शर्मा, अपीलकर्ता के लिए अधिवक्तागण।

चिराग एम. श्रॉफ, शैलेंद्र पी. सिंह, प्रत्यर्थी के लिए अधिवक्तागण।

न्यायालय का निर्णय इनके द्वारा दिया गया था :-

एस. रवींद्र भट्ट, न्या.

1. जिस सीमित प्रश्न पर इस न्यायालय ने नोटिस जारी किया था, वह अभियुक्तों/अपीलकर्ताओं को दी गई सजा की शुद्धता पर विचार करना था। अपीलकर्ताओं की शिकायत विचारण न्यायालय द्वारा बिना किसी छूट के 30 साल की निश्चित अवधि की सजा लगाए जाने से संबंधित है, जिसकी पुष्टि दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय द्वारा की गई थी।

2. मामले के तथ्य संक्षेप में यह हैं कि मृतक (18-20 वर्ष की आयु) का 18-01-2003 को फिरोती के लिए अपहरण कर लिया गया था। उसी दिन साक्ष्य मिटाने के लिए उसकी गला दबाकर हत्या कर दी गई और शव को जला दिया गया। मृतक के पिता (शिकायतकर्ता) ने 18.01.2003 को ही पुलिस में 'गुमशुदगी की रिपोर्ट' दर्ज कराई, जिसके बाद उन्हें उनके बेटे के ठिकाने और उसकी सुरक्षा के बारे में जानकारी के बदले पैसे की मांग करते हुए, अलग-अलग लोगों से छः फिरोती कॉल (19.01.2003, 20.01.2003, 01.02.2003, 02.02.2003, 10.03.2003, 11.03.2003 को) प्राप्त हुए। कॉल रिकॉर्ड की ट्रैकिंग करके, पहले अभि-1 के साथ एक

संबंध स्थापित किया गया था, जिसने अभि-2 और अभि-3 की भागीदारी का खुलासा किया था। अभि-1 की निशानदेही पर मृतक की एक सोने की चेन और एक मोटरसाइकिल बरामद की गई, जिस पर मृतक को आखिरी बार देखा गया था; अभि-2 से मृतक की कलाई घड़ी और गला घोटने के लिए इस्तेमाल किया गया काला मफलर बरामद किया गया। अभि-1 के खुलासे से अपहरण के लिए इस्तेमाल की गई कार भी बरामद हुई, जिसमें मृतक का गला घोंटा गया था। उनके खिलाफ एकत्र किए गए सबूतों में फिरोती कॉल रिकॉर्डिंग की तुलना करने के लिए आवाज के नमूने और अभि.सा. -7, अभि.सा. -2 और अन्य द्वारा पहचान शामिल थी कि मृतक को आखिरी बार उनके साथ देखा गया था। दिनांक 09-05-2003 को तीनों अभियुक्तों ने खुलासा किया कि शव को कहां फेंका गया था, लेकिन उसे बरामद नहीं किया जा सका। जांच करने पर, यह पाया गया कि एक और पुलिस थाने, जिसके अधिकार क्षेत्र में *नाला* आता था, द्वारा दिनांक 19-01-2003 को (यानी, अपहरण के एक दिन बाद) एक आधा जला हुआ शव बरामद किया गया था। इसकी पहचान पिता ने मृतक के रूप में की थी। 11 वर्षों के दौरान अभियोजन पक्ष के 41 गवाहों और बचाव पक्ष के 8 गवाहों का परीक्षण किया गया।

3. विचारण न्यायालय ने तीनों अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 302, 364क, 201 सहपठित धारा 120क के तहत दोषी ठहराया। अभि-1 और अभि-2 (वर्तमान अपीलकर्ता) को भी धारा 411 के तहत दोषी ठहराया गया था, अभि-1 को इसके अतिरिक्त भारतीय दंड संहिता की

धारा 420, 468 और 471 के तहत दंडनीय अपराधों के लिए भी दोषी ठहराया गया था। उन्हें उनके प्राकृतिक जीवन की शेष अवधि के लिए आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई थी, और अभि-1 और अभि-2 पर एक अतिरिक्त शर्त लगाई गई थी - कि वे 30 वर्ष की सजा पूरी करने से पहले किसी भी पैरोल, परिहार या फलों के हकदार नहीं होंगे। उन्हें प्रत्येक को ₹ 2,10,000 रुपये का जुर्माना, और पीड़ित के परिवार को मुआवजे के रूप में ₹ 4,00,000 रुपये अदा करने की सजा भी सुनाई गई थी।

4. उच्च न्यायालय ने प्रस्तुत तथ्यों की विवेचना करते हुए अपने समान आक्षेपित निर्णय से अभि-3 जोगिंदर @ मिंटू को सभी आरोपों से बरी कर दिया; और वर्तमान अपीलकर्ताओं को केवल धारा 411 के तहत अपराध के लिए बरी किया, लेकिन अन्य अपराधों के साथ-साथ विचारण न्यायालय द्वारा दी गई इसी सजा के लिए उनकी दोषसिद्धि की पुष्टि की। निर्णय से व्यथित, अभि-1 और अभि-2 ने दोषसिद्धि और सजा दोनों को चुनौती देते हुए इस न्यायालय का दरवाजा खटखटाया है; इस न्यायालय ने सजा के सीमित सवाल पर नोटिस जारी किया।

याचिकाकर्ताओं की दलीलें

5. अपीलकर्ताओं की ओर से पेश वरिष्ठ अधिवक्ता सुश्री मीनाक्षी अरोड़ा ने *भारत संघ बनाम श्रीहरन @ मुरुगन और अन्य* मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर जोर दिया, जिसमें स्पष्ट रूप से कहा गया था कि यह विचारण न्यायालय के अधिकार क्षेत्र से बाहर था कि वह मौत की

सजा के विकल्प के रूप में एक विशिष्ट अवधि की सजा या सामान्य जीवन के अंत तक की सजा प्रदान करे। यह आग्रह किया गया था कि इस पहलू को, हालांकि, उच्च न्यायालय द्वारा अनदेखा किया गया था - जो गलत निर्णय को रद्द करने के लिए पर्याप्त कारण था।

6. यह आग्रह किया गया था कि उच्च न्यायालय ने अपने आक्षेपित निर्णय में, दोषसिद्धि पर अपील को खारिज करते हुए, उचित विचार किए बिना, सजा पर दिए गए तर्कों को भी खारिज कर दिया था। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 386(ख)(ii) और (iii) पर यह तर्क देने के लिए भरोसा किया गया था कि सजा के आदेश का न्यायनिर्णयन और परीक्षण अभी भी आवश्यक है, भले ही धारा 386(ख)(i) के तहत दोषसिद्धि के आदेश को बरकरार रखा गया हो या संशोधित किया गया हो; अपीलीय न्यायालय को विशेष रूप से दी गई सजा की मात्रा और प्रकृति पर अभियुक्त को सुनना था। ऐसा करते समय, अपराधी परिवीक्षा अधिनियम के तहत अधिकारी द्वारा रिपोर्ट और/या मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन रिपोर्ट मांगना अनिवार्य है, ताकि उस पर न्यायनिर्णयन किया जा सके।

7. सुश्री अरोड़ा ने प्रस्तुत किया कि सजा के विवेक का मार्गदर्शन करने के लिए शमनकारी परिस्थितियों को महत्व दिया जाना चाहिए; प्रासंगिक कारक हैं - जिस उम्र में अपराध किया गया था, जेल में दोषी के सुधरने की संभावना आदि। *अमित बनाम महाराष्ट्र राज्य* और *लक्ष्मण नस्कर बनाम पश्चिम बंगाल राज्य* मामलों में इस न्यायालय के निर्णयों पर भरोसा किया गया था। अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि परिवीक्षा

अधिकारी की रिपोर्ट, जेल आचरण रिपोर्ट और मनोवैज्ञानिक की रिपोर्ट के अनुसार अच्छे और सामान्य सामाजिक व्यवहार, सुधार और समाज में पुनः एकीकरण की संभावना का समर्थन करने वाले साक्ष्य मजबूत थे - ये सभी इस न्यायालय के आदेशों के अनुपालन में तैयार की गई थीं। अपीलकर्ताओं की कोई आपराधिक पृष्ठभूमि नहीं थी, यह भी उनके पक्ष में एक कारक था। यह बताया गया कि अपीलकर्ता विकास चौधरी, अपहरण और हत्या के समय 18 वर्ष से कम उम्र का था, लेकिन कथित फिरौती कॉल के दौरान बालिग हो गया था। इसलिए, नाबालिग होने के लाभ से उसे वंचित कर दिया गया था, और दोषसिद्धि पूरी तरह से परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर आधारित थी।

8. अधिवक्ता ने इस न्यायालय के निर्णयों पर भी भरोसा किया, जिसमें मौत की सजा देने के मामले में सजा की नीति पर विस्तार से बताया गया है। *राजेंद्र प्रहलादराव वासनिक बनाम महाराष्ट्र राज्य* में, इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने यह निर्धारित करने के महत्व पर जोर दिया कि क्या अभियुक्तों को, उनके अपराध के बावजूद, सुधार, पुनर्वास और पुनर्गठित किया जा सकता है, और यह कि इस जानकारी को प्राप्त करने की कार्यवाही आवश्यक है, और इसे किया जाना चाहिए। यह तर्क दिया गया था कि शमनकारी परिस्थितियों और परिवीक्षा अधिकारी की रिपोर्ट पर न तो विचारण न्यायालय और न ही उच्च न्यायालय द्वारा विचार किया गया था। अधिवक्ता ने सजा के माध्यम से सुधार के सिद्धांत के महत्व पर जोर दिया और प्रस्तुत किया कि गंभीर अपराधों के

लिए सजा की विशेष श्रेणी, जहां मौत की सजा को निश्चित संख्या में वर्षों के लिए आजीवन कारावास के साथ प्रतिस्थापित किया जाता है (जैसा कि *स्वामी श्रद्दानंद (2) बनाम कर्नाटक राज्य* में प्रकट हुआ और *श्रीहरन* मामले में बरकरार रखा गया), मैं अभी भी इन कारकों पर विचार करने की आवश्यकता है। *संतोष कुमार सतीश भूषण बरियार बनाम महाराष्ट्र राज्य, हरियाणा राज्य बनाम जगदीश, रमेश बनाम राजस्थान राज्य, बिरजू बनाम मध्य प्रदेश राज्य, शंकर किसनराव खाड़े बनाम महाराष्ट्र राज्य, अनिल @ एंथनी अरिकस्वामी जोसेफ बनाम महाराष्ट्र महाराष्ट्र राज्य, राजू जगदीश पासवान बनाम महाराष्ट्र राज्य, सतीश @ सब्बे बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, और मोहम्मद फिरोज़ बनाम मध्य प्रदेश राज्य* पर भरोसा किया गया।

राज्य की दलीलें

9. राज्य के विद्वान अधिवक्ता चिराग एम. श्रॉफ ने दलील दी कि समवर्ती निष्कर्षों के आधार पर दोषसिद्धि और सुनाई गई सजा वर्तमान मामले के अनुरूप है, जो एक निर्मम हत्या थी। यह प्रस्तुत किया गया था कि गुप्त तरीके से किए गए अपहरण का कार्य और घटनाओं की श्रृंखला को निर्देशित करने वाली विचार प्रक्रिया को पूर्व-योजना और पूर्व-ध्यान के साथ निष्पादित किया गया था। इसका प्रमाण इस तथ्य से मिलता है कि मृतक की 19.01.2003 को हत्या कर दी गई थी, और परिवार को विश्वास दिलाया गया था कि उनका बेटा जीवित है, और जिसके मद्देनजर वे नियमित रूप से परिवार से फिरोती की मांग करते थे। *अरविंद सिंह बनाम महाराष्ट्र राज्य* पर यह दलील देने के लिए भरोसा किया गया कि यदि

फिरौती के उद्देश्य से या अन्यथा केवल धमकी वास्तविकता बन जाती है, और पीड़ित को मौत के घाट उतार दिया जाता है, तो यदि सत्र न्यायालय ने एक निर्दिष्ट सजा पारित की थी जिसे उच्च न्यायालय द्वारा बरकरार रखा गया है, तो इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप अनपेक्षित था।

10. यह बताया गया कि अपीलकर्ताओं के शिक्षित होने और संपन्न परिवारों से संबंधित होने के बावजूद एक नाबालिग पीड़ित (लगभग 18 वर्ष) की हत्या की वीभत्स प्रकृति से पता चलता है कि वे अच्छी तरह से जानते थे और उन्हें अपने कार्यों - अपहरण, हत्या और अंत में, जलाकर और अवशेषों को तालाब में फेंककर शव को ठिकाने लगाना, के बारे में पूरी जानकारी थी। यह तर्क दिया गया कि ये परिस्थितियाँ उचित ठहराती हैं कि यह एक निर्मम हत्या थी, जो गंभीर से गंभीरतम श्रेणी के मामलों में से एक के भीतर आती है।

11. धिवक्ता ने स्वीकार किया कि इस न्यायालय ने *श्रीहरन* (पूर्वोक्त) में माना कि केवल उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय के पास आजीवन कारावास से अधिक, लेकिन मौत की सजा से कम सजा पारित करने की शक्ति थी; हालांकि, यह बताया गया कि इस न्यायालय ने उस निर्णय में इस प्रस्ताव से भी इनकार किया था कि सजा देने वाले न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता में निर्धारित केवल मौत या आजीवन कारावास की सजा देनी चाहिए। इसलिए, केवल इसलिए कि सत्र न्यायालय ने इस तरह की शक्ति का प्रयोग किया था, इसने सजा को पूरी तरह से दूषित नहीं किया। इसके बजाय, यह तर्क दिया गया कि इस तथ्य का, कि

उच्च न्यायालय ने सजा की पुष्टि की थी, अर्थ था कि *श्रीहरन* (पूर्वोक्त) में अधिकथित कानून की भावना को प्रभावी किया गया था। *गौरी शंकर बनाम पंजाब राज्य* मामले पर भरोसा किया गया, जिसमें अपराध की विकृत प्रकृति को देखते हुए, इस न्यायालय ने सजा पर सत्र न्यायालय के आदेश को बरकरार रखा था, जो इसकी शक्तियों के दायरे से अधिक पारित की गई थी।

12. श्री श्रॉफ ने यह भी प्रस्तुत किया कि इस न्यायालय के निर्देशों के अनुसार प्रस्तुत वीआईएमएचएनएस रिपोर्ट एक तटस्थ रिपोर्ट थी, जिस पर 'शमनकारी परिस्थितियों' को प्रदर्शित करने के रूप में भरोसा नहीं किया जा सकता है क्योंकि यह अपराधों के समय अपीलकर्ताओं की मानसिक स्थिति के बारे में बात नहीं कर सकती है। यह आवश्यक रूप से पुनर्वास या सुधार की किसी भी संभावना का समर्थन नहीं करती है।

विश्लेषण और तर्क

13. *बचन सिंह बनाम भारत संघ* में, इस न्यायालय ने मौत की सजा को बरकरार रखा, इस चेतावनी के अधीन कि इसे *दुर्लभतम मामलों* में लागू किया जाना चाहिए। न्यायालय ने अपने बाद के निर्णयों में मौत की सजा के प्रति एक सैद्धांतिक दृष्टिकोण विकसित करने का प्रयास किया। *मच्छी सिंह बनाम पंजाब राज्य* मामले में इस न्यायालय ने *बचन सिंह* मामले में की गई टिप्पणियों को आधार बनाते हुए व्यक्त किया कि “शमनकारी व उत्तेजक परिस्थितियों” का तुलन-पत्र तैयार करने की जरूरत

है, जहां “शमनकारी परिस्थितियों को पूरा महत्व दिया जाना चाहिए और विकल्प का उपयोग करने से पहले उत्तेजक और शमनकारी परिस्थितियों के बीच एक उचित संतुलन बनाया जाना चाहिए।” न्यायालय ने एक व्यापक द्वि-आयामी दृष्टिकोण भी अधिकथित किया :-

“(क) क्या अपराध के बारे में कुछ ऐसा असामान्य है जो आजीवन कारावास की सजा को अपर्याप्त बनाता है और मौत की सजा की मांग करता है?

(ख) क्या अपराध की परिस्थितियां ऐसी हैं कि अपराधी का पक्ष लेने वाली शमनकारी परिस्थितियों को अधिकतम महत्व देने के बाद भी मौत की सजा देने के अलावा कोई विकल्प नहीं है?”

14. पिछले लगभग दो दशकों के दौरान, हालांकि, मौत की सजा के निर्णयों ने कोई सममित दृष्टिकोण नहीं अपनाया; इसके कारण न्यायालय को एक से अधिक मौकों पर अफसोस जताना पड़ा कि उत्तेजक और शमनकारी परिस्थितियों पर विचार करने की कवायद (जिस पर *बचन सिंह* मामले ने प्रकाश डाला था) एक औपचारिकता बनकर रह गई है। *संतोष कुमार सतीशभूषण बरियार* (पूर्वोक्त) मामले में, इस न्यायालय ने यह तय करने के लिए *दो-चरणीय प्रक्रिया* का प्रतिपादन किया कि क्या कोई दोषी मौत की सजा का हकदार है :- पहला, यह कि मामला “दुर्लभतम” श्रेणी का था, और दूसरा, कि आजीवन कारावास का विकल्प पर्याप्त नहीं होगा। पहले चरण के अनुसार, उत्तेजक और शमनकारी परिस्थितियों की पहचान की जानी थी और समान रूप से विचार किया जाना था। दूसरे चरण में, न्यायालय को इस बात पर विचार करना था कि क्या आजीवन कारावास

का विकल्प निर्विवाद रूप से वर्जित है क्योंकि सजा का सुधार का उद्देश्य अप्राप्य था, जिसके लिए *राज्य सामग्री प्रदान करने के लिए बाध्य था। शंकर किसनराव खाडे* (पूर्वोक्त) मामले में न्यायालय ने 'अपराध'; 'अपराधी' और 'आर एंड आर परीक्षण' (दुर्लभतम परीक्षण) का निर्माण किया, जिसने सभी कारकों को गहन रूप से देखने की आवश्यकता पर जोर दिया। इस न्यायालय ने इस बात पर भी प्रकाश डाला कि पिछले कई निर्णयों में, शमानकारी परिस्थितियों पर विचार किए बिना *और दोषी के सुधार की संभावना पर किसी भी सामग्री के अभाव* में सजा का सहारा लिया गया था।

श्रीहरन में निर्णय

15. *स्वामी श्रद्दानंद* (पूर्वोक्त) मामले में इस न्यायालय को एक मामले में दी जाने वाली उचित सजा तय करनी थी, जहां दो न्यायाधीशों ने मौत की सजा देने के मुद्दे पर मतभेद व्यक्त किया था। न्यायालय ने *गोपाल विनायक गोडसे बनाम महाराष्ट्र राज्य* मामले में संविधान पीठ की अपनी पिछली विनिर्णय व्यवस्था, अन्य निर्णयों में टिप्पणियों (जैसे दलबीर सिंह बनाम पंजाब राज्य, सुभाष चंद्र बनाम कृष्ण लाल; श्री भगवान बनाम राजस्थान राज्य; मध्य प्रदेश राज्य बनाम रतन सिंह और अन्य मामले) पर विचार किया। न्यायालय ने *स्वामी श्रद्दानंद* (पूर्वोक्त) मामले में निम्नानुसार टिप्पणी की थी [एससीआर, पृष्ठ 143-144] :-

“65. [...] किशोरी लाल बनाम किंग एंपरर, (1945) 58 एलडब्ल्यू 251, गोपाल विनायक गोडसे बनाम महाराष्ट्र राज्य, (1961) 3

एससीआर 440; मारु राम बनाम भारत संघ, (1981) 1 एससीआर 1196; मध्यप्रदेश राज्य बनाम रतन सिंह, (1976) 3 एससीसी 470 और श्री भगवान बनाम राजस्थान राज्य, (2001) 6 एससीसी 296 में प्रतिपादित कानूनी स्थिति से और आजीवन कारावास के मामलों में वास्तव में छूट की अनुमति देने के अनुचित तरीके से बहुत कम मामलों, जहां मौत की सजा को आजीवन कारावास या चौदह साल से अधिक की अवधि के कारावास की सजा से प्रतिस्थापित किया जा सकता है, के लिए एक विशेष श्रेणी बनाने और उस श्रेणी को छूट के आवेदन से परे रखने हेतु एक अत्यधिक मजबूत मामला बनता है।

66. मामले को थोड़ा अलग कोण से देखा जा सकता है। सजा के मुद्दे के दो पहलू हैं। एक सजा अत्यधिक और अनुचित रूप से कठोर हो सकती है या यह अत्यधिक असंगत रूप से अपर्याप्त हो सकती है। जब कोई अपीलकर्ता विचारण न्यायालय द्वारा दी गई और उच्च न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई मौत की सजा के साथ इस न्यायालय में आता है, तो यह न्यायालय वर्तमान अपील की तरह यह पा सकता है कि यह मामला दुर्लभतम श्रेणी से कम है और मौत की सजा का समर्थन करने में कुछ हद तक अनिच्छुक महसूस कर सकता है। लेकिन साथ ही, अपराध की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, न्यायालय दृढ़ता से महसूस कर सकता है कि सामान्य रूप से 14 साल की अवधि के लिए छूट के अधीन आजीवन कारावास की सजा पूरी तरह से असंगत और अपर्याप्त होगी। तो फिर न्यायालय को क्या करना चाहिए? यदि न्यायालय का विकल्प केवल दो सजाओं तक सीमित है, एक कारावास की सजा, सभी इरादों और उद्देश्यों के लिए, 14 वर्ष से अधिक नहीं और दूसरी मृत्यु, तो न्यायालय बहकावे में आ सकता है और मौत की सजा का समर्थन करने के लिए प्रेरित हो सकता है। इस तरह का मार्ग वास्तव में विनाशकारी होगा। इससे कहीं अधिक न्यायसंगत, तर्कसंगत और उचित तरीका यह होगा कि विकल्पों का विस्तार किया जाए और जो कुछ भी वास्तव में कानूनी रूप से न्यायालय से संबंधित है, उसे अपने हाथ में ले लिया जाए यानी

14 साल की कैद और मौत के बीच का विशाल रिक्त स्थान। इस बात पर जोर देने की जरूरत है कि न्यायालय मुख्य रूप से विस्तारित विकल्प का सहारा लेगा क्योंकि मामले के तथ्यों में, 14 साल के कारावास की सजा कोई सजा नहीं होगी।”

16. श्रीहरन मामले में इस न्यायालय द्वारा गंभीर अपराधों, जिनमें सजा के विकल्प के रूप में, मौत की सजा (आजीवन कारावास के अलावा) थी, में सजा (जिसे विशेष या निश्चित अवधि की सजा कहा जाता है) अधिरोपित करने की उपयुक्तता पर विचार किया गया था। बहुमत के निर्णय ने पिछले निर्णयों पर विचार करने के बाद अभिनिर्धारित किया कि स्वामी श्रद्दानंद (पूर्वोक्त) मामले में अनुपात सही था। स्वामी श्रद्दानंद मामले में निर्णय पर टिप्पणी करते हुए, न्यायालय ने श्रीहरन मामले में कहा कि [एससीआर, पृष्ठ 701; और 710-711] :-

“87. [...] ऐसा कहकर वह जो घोषित करना चाहता है, वह यह था कि किए गए अपराध की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, आजीवन कारावास की सजा की निर्धारित सीमा के भीतर, एक निर्दिष्ट अवधि के लिए आजीवन कारावास अधिरोपित करना अपराध के साथ-साथ पीड़ित के हित के आनुपातिक होगा, जिसके हित का भी, अधिरोपित किए जाने वाले दंड की प्रकृति पर विचार करते समय, न्यायालय द्वारा ध्यान रखा जाना है।

104. इसलिए, हम दोहराते हैं कि ऐसे विनिर्दिष्ट अपराधों के लिए दंड संहिता में प्रदान की गई सजा के भीतर किसी भी संशोधित सजा के लिए दंड संहिता से प्राप्त शक्ति का उपयोग केवल उच्च न्यायालय द्वारा और आगे अपील की स्थिति में केवल सर्वोच्च न्यायालय द्वारा किया जा सकता है, न कि इस देश में किसी अन्य न्यायालय द्वारा। इसे अलग तरीके से कहें, तो मौत की सजा के विकल्प के रूप में कारावास की किसी भी विशिष्ट अवधि या

दोषी के जीवन के अंत तक संशोधित सजा देने की शक्ति का उपयोग केवल उच्च न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय द्वारा किया जा सकता है, न कि किसी अन्य निचले न्यायालय द्वारा।

इस संबंध में देखते हुए, हम कहते हैं कि स्वामी श्रद्दानंद (2) बनाम कर्नाटक राज्य, (2008) 13 एससीसी 767] में निर्धारित अनुपात कि सजा की एक विशेष श्रेणी; मौत के बजाय; 14 वर्ष से अधिक की अवधि के लिए और उस श्रेणी को छूट के आवेदन से परे रखना, अच्छी तरह से स्थापित है और हम उक्त प्रश्न का उत्तर सकारात्मक रूप से देते हैं। इसलिए हम संगीत बनाम हरियाणा राज्य, (2013) 2 एससीसी 452 मामले में इस न्यायालय द्वारा व्यक्त की गई राय से सहमत नहीं हैं कि 20 या 25 साल की या बिना किसी छूट के क्योंकि इसकी अनुमति नहीं है, सजा प्रदान कर उचित सरकार की छूट की शक्ति का हनन कानून के अनुरूप नहीं है और हम विशेष रूप से इसे खारिज करते हैं।”

17. इस प्रकार यह स्पष्ट है कि श्रीहरन (पूर्वोक्त) मामले ने उन मामलों में एक वैकल्पिक तीसरी सजा के विकल्प को मंजूरी दी, जहां अभियुक्तों को संगीन और गंभीर अपराधों के लिए दोषी ठहराया जाता है, जिसमें मौत की सजा का विकल्प होता है। यह महसूस करते हुए कि अपने आप में आजीवन कारावास की सजा के परिणामस्वरूप धारा 433 ए के तहत निर्धारित न्यूनतम सजा पूरी होने पर अभियुक्तों की जल्द रिहाई हो सकती है और विभिन्न प्रकार की आजीवन कारावास की सजा के संबंध में राज्य के नियमों में विषमता पर प्रकाश डालते हुए, इस न्यायालय ने अपने लिए (और उच्च न्यायालयों के लिए) श्रीहरन मामले में बताई गई "विशेष" या "निश्चित अवधि की सजा" अधिरोपित करने का विकल्प बनाए रखने का

फैसला किया। इसे निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति के रूप में देखा गया

था:-

(क) मौत के मामलों में एक व्यवहार्य विकल्प के रूप में जहां न्यायालय की राय थी कि मौत की सजा अनुचित है, और:

(ख) कि न्यायालय की राय थी कि अपराध और अपराधी के आचरण में ऐसे तत्व थे जो दंड प्रक्रिया संहिता द्वारा निर्धारित न्यूनतम 14 साल से अधिक की अनिवार्य सजा को अधिरोपित करने के लिए आवश्यक थे।

(ग) जहां न्यायालय ने स्वतंत्र रूप से महसूस किया कि अपराध की गंभीर प्रकृति और इसके होने के तरीके के लिए एक विशेष सजा की आवश्यकता है, जिसके तहत अपराधी को रिहा करने में राज्य के विवेकाधिकार को कम किया जाना चाहिए ताकि दोषी को निर्दिष्ट वर्षों की कैद से गुजरने से पहले बाहर न जाने दिया जाए।

18. इसलिए यह स्पष्ट है कि विचारण न्यायालय के लिए मौत की सजा के विकल्प के रूप में दोषी के शेष जीवन के लिए इस तरह की संशोधित या विशिष्ट अवधि की सजा या आजीवन कारावास देना वर्जित है। मौत की सजा या आजीवन कारावास से दंडनीय अपराध की सुनवाई करते समय न्यायालय के पास केवल ये दो विकल्प होते हैं। जबकि *श्रीहरन* (पूर्वोक्त) में विकसित सिद्धांत स्पष्ट हैं, फिर भी ऐसे मुद्दे हैं जो अभी भी अस्पष्टीकृत और अनसुलझे हैं। जब भी राज्य मौत की सजा देने का प्रस्ताव करता है और आग्रह करता है, तो उसे आवश्यक रूप से न्यायालय को शमनकारी परिस्थितियों के साथ उत्तेजक कारकों को संतुलित करने की कवायद करने में मदद करने के लिए सामग्री प्रदान करनी होती है - जो

बचन सिंह मामले में प्रतिपादित और कई मामलों में जांचा गया परीक्षण है; हाल की प्रवृत्ति यह है कि सुधारात्मक तत्व समान रूप से ध्यान प्राप्त करता है। इस संतुलनकारी हित को पूरा करने का दायित्व पहली बार में सजा देने वाले न्यायालयों पर है, यानी विचारण न्यायालय; अभियोजन पक्ष (बचन सिंह के अनुसार) यह दिखाने के लिए भी बाध्य है कि शमनकारी परिस्थितियां अनुपस्थित हैं, खासकर यह कि अभियुक्त के सुधार की कोई संभावना नहीं है। चूंकि जब भी जघन्य अपराध किया जाता है, तो दोषसिद्धि के स्तर पर यह अभ्यास अनिवार्य होता है, इसलिए न्यायालय को इस बात का कोई अंदाजा नहीं है कि अभियोजन पक्ष मौत की सजा का आग्रह कर सकता है। जब वह चरण आता है, और अभियोजन मौत की सजा की मांग करता है, तो न्यायालय को उत्तेजक परिस्थितियों (जो पहले से ही ऐसे कारकों के रूप में अभिलेख पर हैं, जो अभियुक्त की दोषसिद्धि का कारण बनते हैं) की समीक्षा करने की और शमनकारी परिस्थितियों (जो अभिलेख का मामला नहीं हैं और अभियोजन पक्ष और अभियुक्त द्वारा प्रस्तुत की जानी हैं) को संतुलित करने की कवायद करनी पड़ती है।

19. इस न्यायालय ने, मनोज बनाम मध्य प्रदेश राज्य मामले में राजेंद्र प्रहलादराव वासनिक (पूर्वोक्त), छन्नू लाल वर्मा बनाम छत्तीसगढ़ राज्य, अनिल @ एंथनी अरिकास्वामी जोसेफ (पूर्वोक्त) के रूप में प्रकाशित किए गए निर्णयों और कई अन्य निर्णयों, विधि आयोग की रिपोर्ट पर विचार किया और अभिनिर्धारित किया कि [एससीआर, पृष्ठ 573-576] :-

“212. सुधार का लक्ष्य आदर्शस्वरूप है, और समाज को जिस दिशा में प्रयास करना चाहिए - दशकों से इस न्यायालय के न्यायशास्त्र में इसके कई संदर्भ हैं - लेकिन जो कमी है वह एक ठोस ढांचे की है जो इसे माप सके और इसका मूल्यांकन कर सके। दुर्भाग्य से, यह एक सार्थक प्रकार के जेल सुधारों को लागू करने में विफलता से प्रतिबिंबित होता है, जिसने सामान्य रूप से कैद और जेलों की प्रक्रिया को प्रणालीगत सुधार के लिए सीमित क्षमता का स्थान बना दिया है। सुधारात्मक सजा के लक्ष्य के लिए ऐसी प्रणालियों की आवश्यकता होती है जो सूक्ष्म नीति निर्माण के परिणामस्वरूप सक्रिय रूप से सुधार और पुनर्वास को सक्षम करती हैं। इन विषम परिणामों को ठीक करने और इस बात के बेहतर मूल्यांकन की सुविधा के लिए एक छोटे से कदम के रूप में कि क्या अभियुक्त के सुधार की संभावना है (आचरण, पारिवारिक पृष्ठभूमि, आदि के अस्पष्ट संदर्भों से परे), यह न्यायालय न्यायालयों द्वारा अपनाए जाने और लागू करने हेतु व्यावहारिक दिशानिर्देश तैयार करना आवश्यक समझता है, जब तक विधायिका और कार्यपालिका कानून के माध्यम से एक सुसंगत ढांचा तैयार करती है। शमनकारी परिस्थितियों के बारे में जानकारी को व्यवस्थित रूप से एकत्र और इसका मूल्यांकन करने के लिए ये दिशानिर्देश मार्गदर्शन या विचार भी प्रदान कर सकते हैं, जिससे इस तरह के विधायी ढांचे को लाभ हो सकता है।

213. यह सुनिश्चित करने की तत्काल आवश्यकता है कि विचारण के चरण में शमनकारी परिस्थितियों पर विचार किया जाए, ताकि अपराध की क्रूरता के प्रति प्रतिशोधात्मक प्रतिक्रिया में फिसलने से बचा जा सके, जैसा कि अपीलीय चरण तक पहुंचने वाले अधिकांश मामलों में स्पष्ट रूप से स्थिति है।

214. ऐसा करने के लिए, विचारण न्यायालय को अभियुक्त और राज्य दोनों से जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। मौत की सजा वाले अपराध के लिए राज्य को उचित स्तर पर सत्र न्यायालय के समक्ष अभियुक्त के मनोरोग और मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन का खुलासा करते हुए ऐसी सामग्री प्रस्तुत करनी चाहिए जो अधिमानतः पहले

से एकत्र की गई हो। यह अपराध करने के समय अभियुक्त व्यक्ति की मनःस्थिति (या मानसिक बीमारी, यदि कोई हो) के साथ निकटता (समय-सीमा के संदर्भ में) स्थापित करने में मदद करेगा और बचन सिंह में वर्णित शमानकारी कारकों (1), (5), (6) और (7) पर मार्गदर्शन प्रदान करेगा। यहां तक कि (3) और (4) के अन्य कारकों के लिए भी - जो सीधे तौर पर राज्य का दायित्व हैं - अपराध होने के तुरंत बाद इस तरह के मनोरोग संबंधी और मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन का संचालन करना, अपीलीय न्यायालयों को तुलना के लिए उपयोग करने के लिए एक आधार रेखा प्रदान करेगा, यानी, कारावास की अवधि के दौरान सुधार की दिशा में अभियुक्त की प्रगति का मूल्यांकन करना।

215. इसके बाद, राज्य को समयबद्ध तरीके से अभियुक्त से संबंधित अतिरिक्त जानकारी एकत्र करनी चाहिए। संपूर्ण नहीं, लेकिन उदाहरणात्मक सूची इस प्रकार है :-

क) उम्र

ख) प्रारंभिक पारिवारिक पृष्ठभूमि (भाई-बहन, माता-पिता की सुरक्षा, हिंसा या उपेक्षा का कोई इतिहास)

ग) वर्तमान पारिवारिक पृष्ठभूमि (जीवित परिवार के सदस्य, विवाहित अथवा नहीं, बच्चे हैं अथवा नहीं, आदि)

घ) पढ़ाई का प्रकार और स्तर

ङ) सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि (गरीबी या अभाव की स्थितियों सहित, यदि कोई हो)

च) आपराधिक पृष्ठभूमि (अपराध का विवरण और दोषसिद्धी हुई अथवा नहीं, काटी गई सजा, यदि कोई हो)

छ) आय और रोजगार का प्रकार (कोई नहीं, या अस्थायी या स्थायी आदि);

ज) अन्य कारक जैसे अस्थिर सामाजिक व्यवहार का इतिहास, या मानसिक या मनोवैज्ञानिक बीमारी(रियां), व्यक्ति का अलगाव

(कारणों के साथ, यदि कोई हों) आदि। यह जानकारी अनिवार्य रूप से विचारण न्यायालय को सजा के चरण में उपलब्ध होनी चाहिए। अभियुक्तों को भी खंडन में साक्ष्य प्रस्तुत करने का समान अवसर दिया जाना चाहिए, ताकि सभी शमनकारी परिस्थितियाँ स्थापित की जा सकें।

216. अंत में, अभियुक्त के जेल आचरण और व्यवहार, किए गए कार्य (यदि कोई हों), अभियुक्त द्वारा खुद को शामिल करने वाली गतिविधियों और अन्य संबंधित विवरणों के बारे में जानकारी संबंधित जेल अधिकारियों (यानी, परिवीक्षा और कल्याण अधिकारी, जेल अधीक्षक, आदि) से एक रिपोर्ट के रूप में मांगी जानी चाहिए। यदि विचारण न्यायालय की दोषसिद्धि, या उच्च न्यायालय की पुष्टि से लंबे अंतराल के बाद अपील पर सुनवाई की जाती है, जैसा भी मामला हो - जेल अधिकारियों से एक नई रिपोर्ट (पिछली न्यायालय द्वारा उपयोग की गई रिपोर्ट के बजाय) मंगाने की सिफारिश की जाती है, ताकि बीत चुके समय में अभियुक्त द्वारा की गई समकालीन प्रगति की अधिक सटीक और पूर्ण समझ हो सके। जेल अधिकारियों को एक ताजा मनोरोग और मनोवैज्ञानिक रिपोर्ट भी शामिल करनी चाहिए जो सुधारात्मक प्रगति का साक्ष्य देगी, और दोषसिद्धि के बाद मानसिक बीमारी, यदि कोई हो, का खुलासा करेगी।

217. यह बताना उचित है कि *अनिल बनाम महाराष्ट्र राज्य* मामले में इस न्यायालय ने वास्तव में आपराधिक न्यायालयों को अतिरिक्त सामग्री की मांग करने का निर्देश दिया है :-

“कई बार, सजा का निर्धारण करते समय, अदालतें किसी विशेष मामले के तथ्यों को देखते हुए इसे हल्के में लेती हैं, कि अभियुक्त समाज के लिए खतरा होगा और सुधार और पुनर्वास की कोई संभावना नहीं है, जबकि उन कारकों का पता लगाना न्यायालय का कर्तव्य है, और राज्य अभियुक्त के सुधार और पुनर्वास की संभावना के लिए और उसके खिलाफ सामग्री प्रस्तुत करने के लिए बाध्य है। किसी दिए गए मामले

में न्यायालय जिन तथ्यों से निपटते हैं, वे ऐसे निष्कर्ष पर पहुंचने का आधार नहीं हो सकते हैं, जो, जैसा कि पहले ही कहा गया है, अतिरिक्त सामग्री की मांग करते हैं। इसलिए, हम निर्देश देते हैं कि आपराधिक न्यायालय, दोषसिद्धि के बाद, आईपीसी की धारा 302 जैसे अपराधों से निपटते समय, उचित मामलों में, यह निर्धारित करने के लिए एक रिपोर्ट मांग सकती हैं कि क्या अभियुक्त को सुधारा जा सकता है या उसका पुनर्वास किया जा सकता है, जो प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है।”

हम एतद् द्वारा इसका पूरी तरह से समर्थन करते हैं और निर्देश देते हैं कि उन अपराधों की दोषसिद्धि के लिए जो मौत की सजा की संभावना रखते हैं, इसे समान रूप से लागू किया जाना चाहिए, जैसा कि ऊपर विस्तृत रूप से बताया गया है।”

20. “अपराध की क्रूरता के लिए प्रतिशोधी प्रतिक्रिया में फिसलने से बचने के लिए” जिसे इस न्यायालय ने देखा कि ऐसा कई मामलों में अक्सर हो रहा था, विचारण के स्तर पर शमनकारी परिस्थितियों का मूल्यांकन करने की अनिवार्यता को रेखांकित किया गया था, और यह स्पष्ट रूप से माना गया था कि न्यायालय को राज्य और अभियुक्त से जानकारी प्राप्त करनी थी। अभियोजन पक्ष के लिए सत्र न्यायालय के समक्ष अभियुक्त के मनोरोग और मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन का खुलासा करने वाली सामग्री पेश करने के लिए भी अनिवार्य किया गया है, जिसे अधिमानतः पहले से एकत्र किया जाना है। उस चरण पर जब विचारण न्यायालय को सूचित किया जाता है कि अभियोजन मौत की सजा अधिरोपित करने के लिए दबाव डालने का इरादा रखता है, मूल्यांकन पर जोर दिया जाना चाहिए; जैसा कि मनोज (पूर्वोक्त) में उल्लेख किया गया है, सभी वस्तुनिष्ठ सामग्रियों को

प्रस्तुत करना राज्य का कर्तव्य है, *बचन सिंह* (पूर्वोक्त) में दिए गए निर्णय और महत्वपूर्ण रूप से, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि यह वास्तव में सामग्री इकट्ठा करने की स्थिति में है। इसका कार्य अभियुक्त से संबंधित तथ्यों को प्रस्तुत करना है, जो न्यायालय के लिए उचित सजा देने के लिए अनुकूल और प्रतिकूल हैं।

21. चूंकि *श्रीहरन* (पूर्वोक्त) मामले में निर्णय विशेष या निश्चित अवधि की सजा (जो धारा 433क दं.प्र.सं. में निर्दिष्ट न्यूनतम से अधिक हो सकती है - यानी, काफी लंबी अवधि तक बढ़ सकती है, जैसे कि 30 साल) अधिरोपित करने की शक्ति केवल उच्च न्यायालयों और इस न्यायालय के साथ सुरक्षित रखता है, इसलिए यह जरूरी है कि यह अभ्यास उन मामलों में भी किया जाए जहां अभियुक्त को अंततः मौत की सजा नहीं दी जा सकती है। सीधे शब्दों में कहें - हालांकि विचारण न्यायालयों को इस तरह की विशेष सजा देने का अधिकार नहीं है, फिर भी जब वे एक जघन्य अपराध के मामले में अपराध के निष्कर्षों पर पहुंचते हैं, तो *अंततः* लगाई गई सजा की प्रकृति क्या होगी, अज्ञात है; इसलिए, अभियोजन पक्ष को न्यायालय को सूचित करना होगा, और मौत की सजा प्रस्तावित होने की स्थिति में प्रासंगिक सामग्री (जैसा कि *मनोज* में विस्तार से बताया गया है) पेश करनी होगी। उस स्थिति में, यदि अंततः मौत की सजा नहीं दी जाती है, तो यह राज्य (या पीड़ित पक्ष, धारा 372 दं.प्र.सं. के तहत) के लिए खुला है कि वह सजा के बिंदु पर विचारण न्यायालय के निर्णय के खिलाफ अपील कर सकता है; उस स्तर पर उच्च न्यायालय के समक्ष सूक्ष्म और

दोषी के बारे में पूरी सामग्री की सूचना के साथ मूल्यांकन होगा, अन्यथा इसका लाभ नहीं होगा। इसके अलावा, यदि विचारण चरण, जिस पर यह कार्य किया गया था, के बाद से काफी समय बीत चुका है तो अपीलीय न्यायालय को निर्देश देना चाहिए कि दोषी द्वारा की गई समकालीन प्रगति, यदि कोई हो, को ध्यान में रखने के लिए एक नया प्रयास किया जाए।

22. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि जहां भी अभियोजन पक्ष की राय है कि जिस अपराध के लिए एक अभियुक्त को दोषी ठहराया गया है, वह इतना गंभीर है कि मौत की सजा की आवश्यकता है, उसे मूल्यांकन के लिए *मनोज* के संदर्भ में सामग्री रखने की कवायद करनी चाहिए। यदि इसके परिणामस्वरूप पुष्टि के चरण में मौत की सजा दी जाती है, तो उच्च न्यायालय को इन सामग्रियों के स्वतंत्र मूल्यांकन का लाभ होगा। दूसरी ओर, यदि मौत की सजा नहीं दी जाती है, तो, उच्च न्यायालय अभी भी मूल्यांकन करने की स्थिति में हो सकता है, कि सजा पर्याप्त है या नहीं, और जहां भी उचित और न्यायसंगत हो, राज्य द्वारा या शिकायतकर्ता/सूचित करने वाले द्वारा अपील के दौरान एक विशेष या निश्चित अवधि की सजा लागू की जा सकती है। इस तरह की सामग्री को न्यायालय के विचार का हिस्सा बनाने की अनिवार्य आवश्यकता को देखते हुए, इस बात पर जोर दिया जाना चाहिए कि यदि विचारण न्यायालय इस तरह की कवायद (किसी भी कारण से) करने में विफल रहा है, तो उच्च न्यायालय न्यायालय को सजा बढ़ाने

के लिए राज्य या शिकायतकर्ता द्वारा दायर अपील पर विचार करते समय ऐसी सामग्री की मांग करनी होगी (चाहे इसके परिणामस्वरूप मौत की सजा अधिरोपित किया जाए, या एक अवधि की सजा दी जाए)।

वर्तमान मामले में सजा

23. हाल ही में, इस न्यायालय को पिछले तीन मौकों पर इसी तरह की स्थिति का सामना करना पड़ा था - जिसमें विचारण न्यायालय ने अभियुक्तों को उनके शेष जीवन के लिए आजीवन कारावास की या एक निश्चित अवधि (कम से कम 20 साल तक) के लिए छूट के अधिकार के बिना सजा सुनाई थी। यह, *श्रीहरन* (पूर्वोक्त) के निर्णय के आलोक में स्पष्ट रूप से उस अधिकार क्षेत्र के दायरे से परे था, जिसका विचारण न्यायालय को अधिकार प्राप्त है। तथापि, तीनों मामलों में से प्रत्येक में उच्च न्यायालयों ने दोषसिद्धि और सजा की पुष्टि की थी। इन मामलों में, आजीवन कारावास की सजा के उल्लंघनकारी भाग (यानी, शेष जीवन, या छूट के अधिकार के बिना निश्चित अवधि) को या तो रद्द कर दिया गया था, और आजीवन कारावास की सजा अधिरोपित की गई थी, या तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर, इसे एक अवधि की सजा में संशोधित किया गया था।

24. इस मामले की सुनवाई के दौरान, यह देखा गया कि अपीलकर्ताओं की शमनकारी परिस्थितियों के बारे में सीमित सामग्री थी; मौजूदा जेल रिपोर्ट और परीक्षा अधिकारी की रिपोर्ट भी पुरानी हो चुकी

थीं। इसलिए, दिनांक 05.08.2021 को, इस न्यायालय ने सजा के सवाल पर निष्पक्ष विचार की सुविधा के लिए तीन रिपोर्ट तैयार करने और प्रस्तुत करने का निर्देश दिया। ये थीं :- परिवीक्षा अधिकारी की एक रिपोर्ट, जेल में रहते हुए किए गए काम की प्रकृति पर रिपोर्ट (जेल प्रशासन द्वारा), और एक मनोवैज्ञानिक और मनोरोग मूल्यांकन रिपोर्ट (वीआईएमएचएनएस के निदेशक द्वारा); ये अभिलेख पर हैं, और वर्तमान मामले में उपयुक्त *व्यक्तिगत* सजाएं निर्धारित करने के लिए इस न्यायालय के विचार का हिस्सा हैं। अपीलकर्ताओं के अधिवक्ता ने सजा के सवाल पर संशोधन के लिए शमनकारी कारकों और औचित्यों को रेखांकित करते हुए लिखित प्रस्तुतियों को भी अभिलेख पर रखा है।

25. अपीलकर्ता विकास चौधरी अपराध के समय केवल 18-19 वर्ष का था और वर्तमान में लगभग 37-38 वर्ष का है। सामाजिक जांच रिपोर्ट (परिवीक्षा रिपोर्ट) के अनुसार, वह एक शिक्षित, शहरी, 'मध्यम वर्गीय' पारिवारिक पृष्ठभूमि से आता है; वह 10^{वीं} कक्षा पास कर चुका है, लेकिन उसकी 12^{वीं} कक्षा इस अपराध से संबंधित तथ्यों से बाधित हो गई थी। वह हिरासत में अपने समय के दौरान लिखित कार्य करना जारी रखता है। वह 17 साल से अधिक की वास्तविक सजा काट चुका है, जिसके दौरान उसने संतोषजनक आचरण का प्रदर्शन किया है (दिनांक 30.11.2017 और 18.11.2020 की जेल रिपोर्ट के अनुसार)। जेल में किए गए कार्यों के संबंध में दिनांक 08.09.2021 की रिपोर्ट सकारात्मक है और उल्लेख किया गया है कि उसने अपने कारावास की अवधि के दौरान लंगर, जेल नियंत्रण

कक्ष और वार्ड में सहायक के रूप में काम किया है, जिसके लिए उसे प्रशंसा प्रमाण पत्र मिला है। साल 2012 से पहले आक्रामकता के तीन प्रकरणों को छोड़कर, अभिलेख पर कोई अन्य नकारात्मक उदाहरण नहीं है। वीआईएमएचएनएस की रिपोर्ट में भी चिंता का कोई कारण नहीं बताया गया है। दिनांक 06.09.2021 की नवीनतम परिवीक्षा रिपोर्ट उत्साहजनक है; विचारण न्यायालय को दी गई पिछली रिपोर्ट (दिनांक 01.12.2017 की) के समान, रिपोर्ट में उल्लेख किया गया है कि अपीलकर्ता के अपने माता-पिता और रिश्तेदारों के साथ मजबूत निरंतर संबंध थे। उसके माता-पिता ने उसे स्वीकार कर लिया है और उसके भविष्य के बारे में चिंतित हैं। उसके परिवार के घर के पड़ोसियों, यानी समुदाय के सदस्यों के साथ साक्षात्कार भी सकारात्मक थे। उसका कोई अन्य आपराधिक इतिहास नहीं है। रिपोर्ट में आगे कहा गया है कि अपीलकर्ता के पास सुधार और समाज में पुनः एकीकरण की पर्याप्त गुंजाइश है, और अपीलकर्ता अपने माता-पिता की देखभाल कर सकता है और एक सामान्य सामाजिक जीवन जी सकता है।

26. अपीलकर्ता, विकास सिद्धू, जो अपराध के समय लगभग 20 वर्ष का था, वर्तमान में 40-41 वर्ष का है, और 17 साल से अधिक की वास्तविक कारावास काट चुका है। वह दिल्ली विश्वविद्यालय से स्नातक है और अपराध के समय मेडिकल रिप्रेजेंटेटिव था। उनके परिवार में पांच लोग शामिल थे; हालांकि, उसने अपने पिता को खो दिया है जो एक सरकारी कर्मचारी थे, और अपने छोटे भाई को बीमारी के कारण खो दिया है। वह

भी एक शहरी, 'मध्यम वर्गीय', शिक्षित परिवार में बड़ा हुआ था। वह विवाहित है, और उसे अपनी मां, पत्नी और बड़ी बहन का स्नेह प्राप्त है। अपनी कारावास की अवधि के दौरान, उसने 'पढ़ो और पढ़ाओ' के तहत एक स्वयंसेवक शिक्षक के रूप में काम किया, और अलग-अलग समय पर कानूनी सेल, जेल नियंत्रण कक्ष, इग्नू अध्ययन केंद्र, व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थान, बेकरी इकाई, जेल डिस्पेंसरी में एक सहायक के रूप में काम किया; उसने कुछ महीनों तक जेल फैक्ट्री की पेपर मेकिंग इकाई में भी काम किया। कुछ व्यावसायिक प्रशिक्षण और सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भाग लेने के अलावा, उसे जेल में किए गए काम के लिए कई प्रशंसा प्रमाण पत्र मिले हैं - विशेष रूप से हाल ही में, कोविड-19 संकट के दौरान उसके प्रयासों के लिए। वीआईएमएचएनएस से प्राप्त प्रारंभिक रिपोर्ट में किए गए अनुरोध के अनुसार, विकास सिद्धू का अधिक विस्तृत साइकोमेट्रिक मूल्यांकन किया गया - जिसके परिणामों में साइकोपैथोलॉजी के कोई नैदानिक संकेत या लक्षण नहीं दिखाई दिए; रिपोर्ट में कोई नकारात्मक निष्कर्ष नहीं निकाला गया है। उसका कोई आपराधिक इतिहास नहीं है और वह अपने परिवार के सदस्यों के साथ एक मजबूत संबंध रखता है। उनके मामले में भी, परिवीक्षा रिपोर्ट ने सुझाव दिया कि उसके सुधार और समाज में पुनः एकीकरण के लिए पर्याप्त गुंजाइश थी, और उसने अपनी पत्नी और वृद्ध मां की देखभाल करने की भी संभावना प्रदर्शित की।

27. यह न्यायालय अपीलकर्ताओं द्वारा किए गए अपराध की प्रकृति से भी अवगत है। उन्होंने मृतक 18 वर्षीय लड़के का अपहरण लिया और

बदले में फिरौती मांगी। अभियोजन पक्ष यह साबित करने में सक्षम रहा कि इन अपीलकर्ताओं ने अपहृत लड़के का गला घोट दिया, साक्ष्य मिटाने के लिए उसके शरीर को जला दिया, और शव को एक नाले में फेंक दिया। इस अपराध का एकमात्र उद्देश्य लालच प्रतीत होता है। निस्संदेह, अपराध को अंजाम देने में पूर्व संकल्प था। ये उत्तेजक परिस्थितियां हैं।

28. वर्तमान मामले में दोनों अपीलकर्ता, कुछ समानताएं साझा करते हैं: वे अपराध के समय कम उम्र के थे, शिक्षित पृष्ठभूमि से हैं, और उन्हें अपने परिवारों का प्रेम और स्नेह प्राप्त है, जिनमें से प्रत्येक का वे जिन समुदायों में रहते हैं, उनके भीतर अच्छी स्थिति और मजबूत संबंध हैं। जबकि दोषसिद्धि से पहले उनके जीवन और सामाजिक स्थितियों से संबंधित सामग्री अपराध होने के कारण के बारे में स्पष्टीकरण नहीं देती है, यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि दोषसिद्धि के बाद उनके आचरण के बारे में उपलब्ध सामग्री उत्साहजनक बनी हुई है। उन्होंने कारावास के समय खुद को काम लगाए रखा है और सार्थक योगदान देने के लिए अपने समय का उपयोग किया है - जिसके लिए उन्हें प्रत्येक को प्रशंसा मिली है। चिंता के कारण के बिना, उनके मनोरोग और मनोवैज्ञानिक मूल्यांकन सामान्य होने का निष्कर्ष निकाला गया था। अपीलकर्ताओं के सुधार की संभावना (जैसा कि पहले से ही उनके जेल आचरण से स्पष्ट है), और समाज में पुनः एकीकरण के समर्थन में एक मजबूत मामला बनाया गया है। राज्य ने भी इस पहलू के बारे में इसके विपरीत किसी सामग्री का संकेत नहीं दिया है।

29. तथ्यों और परिस्थितियों की समग्रता को देखते हुए, और उपरोक्त कारणों से, इस न्यायालय की राय है कि दोनों अपीलकर्ताओं को दी गई सजा को न्यूनतम 20 साल के वास्तविक कारावास में संशोधित करना उचित होगा। उपरोक्त शर्तों में अपीलों को आंशिक रूप से अनुमति दी जाती है।

निधि जैन

अपीलों को आंशिक रूप से अनुमति दी गई।

(सहायक: तमन्ना, एलसीआरए)

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

Disclaimer: The translated judgment in vernacular language is meant for the restricted use of the litigant to understand it in his/her language and may not be used for any other purpose for all practical and official purposes, the English version of the judgment shall be authentic and shall hold the field for the purpose of execution and implementation.